International Journal of Education and Science Research Review
IJESRR
E-ISSN 2348-6457
February- 2020, Volume-7, Issue-1
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

रवीन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षा दर्शन का चरित्र निर्माण और नैतिक शिक्षा पर प्रभाव

Prof. Mridula Srivastava,
Ex. H.O.D.,
Department of Psychology,
B.R.A. Bihar University,
Muzaffarpur.

Girjesh Kumari
Research Scholar
Department of Education
B.R.A. Bihar University
Muzaffarpur

1.1 प्रस्तावना

21सदीं के वर्तमान दौर में जहाँ जन संचार क्रान्ति के साधनों ने समग्र विश्व को एक ग्लोबल विलेज के रूप में परिवर्तित कर दिया है, इंटरनेट ने सम्पूर्ण संसार को एक दूसरे से जोड़ दिया है। सम्पूर्ण मानव जाति प्रतिस्पर्धा करते हुए आगे बढ़ने की होड़ में लगी हुई है। ऐसी अवस्था में सम्पूर्ण राष्ट्र के भावी पीढ़ी को सुयोग्य एवं स्वाभिमान पूर्वक निरन्तर अग्रसर करने के लिए गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर के शिक्षा दर्शन की नितांन्त आवश्यकतानुभूति हो रही है। यद्यपि हमारे राष्ट्र के कर्णधार शिक्षा और पाठ्यक्रम के माध्यम से युवा पीढ़ी को दिशा देना चाह रहे हैं। किन्तु आज की पीढ़ी दिशा विहीन, स्वाभिमानहीन, दीनहीन भावना से ग्रसित अराजक तत्वों एवं व्यवस्था के ब्रह्मजाल में उलझती जा रही है। सम्प्रति विज्ञान के बढ़ते दबाव और अन्वेषणों की गति ने यथार्थ की पुष्टि में जो प्रमाण और प्रयोग किए हैं, वे हमारे जीवन के अनिवार्य अंग बनते जा रहे हैं। इस शताब्दी का अपने गौरवपूर्ण अतीत से दूर होकर अपने पूर्वजों के ज्ञान–विज्ञान को भुला कर आधुनिकता के नाम पर पश्चिमीकरण के अंधानुकरण में फँसता भारतीय जीवन मूल्य समूह धर्म को आधापर मान कर वैयक्तिक धर्म पर चलते हुए सतत् परिवर्तनशील धारणा को लेकर राष्ट्रीय चरित्र के उच्च शिखर पर पहुँचकर सदैव विजय पाता रहा है। रामायण एवं महाभारत काल में समूह धर्म का वैयक्तिक धर्म के साथ पालन हुआ। इसी कारण 'यतोधर्मस्ततोजयः' सुभाषित साकार हुआ। उसी काल से प्रेरित होकर रबीन्द्रनाथ टैगोर ने राष्ट्रीय विकास में शिक्षा की उपादेयता को निर्धारित करने का प्रयत्न किया।

1.2 शिक्षा का अर्थ एवं उद्देश्यों का प्रस्तुतीकरण

मानव मस्तिष्क में ज्ञान के संचित कोष के निर्माण की प्रक्रिया को शिक्षा के नाम से जाना जाता है। शिक्षा ही वह

अप्रतिम व अभूतपूर्व शक्ति है, जो एक मनुष्य को ज्ञानवान, विवेकवान एवं विद्वान बनाने का कार्य करती है। यदि शिक्षा का अभाव होता है तो मनुष्य का जीवन न तो विकास के पथ पर गतिमान हो पाता है और न ही उसे अपने जीवन से जुड़े तथ्यों के अध्ययन की अभिक्षमता ही प्राप्त हो पाती है। ''शिक्षा क्या है? क्या वह पुस्तक–विद्या है? नहीं। क्या वह नाना प्रकार का ज्ञान है? नहीं, यह भी नहीं। जिस संयम के द्वारा इच्छाशक्ति का प्रवाह और विकास वश में लाया जाता है और वह फलदायक होता है, वह शिक्षा कहलाती है।''

शिक्षा और दर्शन का बड़ा ही पुराना सम्बन्ध है। शिक्षा के बिना दर्शन अधूरा होता है और दर्शन के बिना शिक्षा की पूर्णता कदापि सम्भव नहीं है। सम्प्रति मानवीय सद्गुणात्मक वृत्तियों के सुनिर्धारण में शिक्षा की उपादेयता को रेखांकित किया जा सकता है। इसके अभाव में आज सम्पूर्ण विश्व से हम कटे से रह जाते हैं। यदि दुनिया से जुड़कर रहना है तथा सबके साथ–साथ विकास की धारा को सबल करना है तो उसके लिए आवश्यक है कि एक ऐसी ज्ञानात्मक शिक्षा को ग्रहण किया जाय, जो समाज के लिए नितान्त उपयोगी हो और हितकारिता वृहत स्तर पर जनोत्थानक संदर्भों से आच्छादित हो।

शिक्षा वह ही श्रेष्ठ होती है जो लोगों के काम आये तथा उनके सर्वांगीण विकास में सहायक हो। व्यक्ति के जीवन को विकास की नई धारा से जोड़े, उसके आन्तरिक एवं वाह्य व्यक्तित्व को मौलिकता प्रदान करे तथा उसे उचितानुचित के ज्ञान का बोध कराये। सहज विवेक और सहृदयता ही समुज्ज्वलता ही व्यक्तित्व विकास की सक्रिय रूप–रेखा के निर्धारण में सहायक होती है। यदि आज की परिस्थिति में शैक्षिक महत्ता को दृष्टिबद्ध किया जाय, तो गुरुदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर की शैक्षिक महत्ता दीख पड़ती है।

''शिक्षा का मतलब यह नहीं है कि तुम्हारे दिमाग में ऐसी बहुत सी बातें इस तरह ठूंस दी जाये, जो आपस में लड़ने लगें और तुम्हारा दिमाग उन्हें जीवनभर में हजम न कर सके। जिस शिक्षा से हम अपना जीवन–निर्माण कर सकें, मनुष्य बन सकें, चरित्रवान कर सकें और विचारों का सामंजस्य कर सकें, वही वास्तव में शिक्षा कहलाने योग्य है। यदि तुम पाँच ही भावों को हजम कर तद्नुसार जीवन और चरित्र गठित कर सकते हो तो तुम्हारी शिक्षा उस आदमी की अपेक्षा बहुत अधिक है, जिसने एक पूरी की पूरी लाइब्रेरी ही कण्ठस्थ कर ली है।''

शिक्षा एक सामान्य से पुरुष को एक श्रेष्ठ और सद्चरित्र मनुष्य बनाती है, जो समाज में अपनी आवश्यकताओं

को अर्जित करते हुए सामाजिकों के लिए भी एक सुन्दर और सुबोध सन्दर्भ ही प्रस्तुत कर सके।

''सामान्य रूप से शिक्षा का कार्य व्यक्ति को न तो समाज के अनुरूप बनने के लिए प्रोत्साहित करना है और न ही समाज के साथ नकारात्मक सामंजस्य लाने के लिए वास्तविक जीवन मूल्यों की खोज में व्यक्ति की सहायता करना ही शिक्षा का कार्य है और ये मूल्य निष्पक्ष अन्वेषण तथा आत्म–सजगता से ही आते हैं। आत्मबोध के अभाव में आत्म–अभिव्यक्ति अहंकार बन जाती हैं और उसके साथ तमाम आक्रामक एवं महत्वाकांक्षी पैदा हो जाते हैं, जो नैतिकता का पतन करते हुए मानवता की अपार क्षति करते हैं। ऐसे असामाजिकगण सदैव राष्ट्र के लिए एक विनाशकारी तत्व के रूप में पाये जाते हैं। इनका कार्य ही बहुभाँति जनमानस को नुकसान पहुँचाना होता है। इसके प्रतिकूल शिक्षा का कार्य आत्म–सजगता की क्षमता को जागृत करना है, न कि तुष्टीकरण वाली आत्माभिव्यक्ति में लिप्त करना। ''शिक्षा का अर्थ है उस पूर्णता को व्यक्त करना जो सब मनुष्यों में पहले ही विद्यमान है।''

इस प्रकार से शिक्षा की उद्‌देश्यमयता आज मानव जीवन में पूर्णरूपेण बनी हुई है। हर प्रकार से मनुष्य शिक्षा को अर्जित कर अपना उत्थान कर सकता है। यद्यपि कुछ विकृतियों के पनपने की वजह से आज समाज में शिक्षा को ज्ञान की संचित राशि के संकलन करने की प्रवृत्ति से न जोड़कर मात्र प्रमाण–पत्रों की भौतिक उपलब्धि तक सीमित कर दिया गया है। यह किसी भी प्रकार से उपयुक्त नहीं है। यदि मनुष्य दार्शनिक पृष्ठभूमि में सुनियोजित करते हुए नैतिक रूप में अपने व्यक्तित्व को सबल बनाने का कार्य करता है तो वह प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से शिक्षा की उपादेयता ही कही जायेगी। जिसके स्वरूप के नियोजनार्थ गुरु रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने अलग–अलग सन्दर्भों में अपने–अपने विचार व्यक्त किये हैं।

1.3 शिक्षा के विभिन्न तथ्यों की तुलनात्मक समीक्षा

विज्ञान और लोकतन्त्र की प्रगति ने मानव–जीवन को नई दृष्टि और नए मूल्य प्रदान किये हैं। इसलिए शिक्षा को नए मानव का विकास करना पड़ेगा, जिससे वह न केवल वर्तमान आवश्यकताओं के वरन् आने वाली आवश्यकताओं के अनुकूल हो सके। इसका लक्ष्य व्यक्ति की जीवन–पद्धति का पुनर्निर्माण और प्रेम, सहयोग तथा न्याय के आधार पर एक नयी समाज व्यवस्था का विकास करना है। आधुनिक शिक्षा आत्मा की ओर से मुँह फेर लेना चाहती है। फलस्वरूप आत्मशक्ति की सम्भावनायें हमारा ध्यान आकर्षित करने की अपेक्षा परिवर्तनशील

भौतिक शक्तियों पर केन्द्रित हो रही हैं। अतः आवश्यकता है उच्चतम् उद्देश्य आत्मा की प्राप्ति की।

1.4 शारीरिक शिक्षा

बचपन के वर्ष बालक के निर्माण के वर्ष होते हैं। इसलिए रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने शिक्षा में चरित्र निर्माण को प्राथमिकता दी, निरी साक्षरी तालीम को नहीं। वे चाहते थे कि प्रारम्भिक शिक्षा की एक प्रक्रिया के रूप में उत्पादक शरीर–श्रम के द्वारा बच्चों में अच्छी आदतों का निर्माण किया जाए। प्राचीन पाठशाला–प्रणाली जिसमें नीति की शिक्षा को पहला स्थान दिया जाता है और यही सच्ची प्राथमिक शिक्षा है। इस बुनियाद पर आधुनिक शिक्षा की तैयार की गई इमारत टिकेगी। इन्होंने बाल केन्द्रित शिक्षा का समर्थन करते हुए उसके आधार पर स्वानुभव, स्वाध्याय, करके सीखना एवं अनुकरण द्वारा सीखने की विद्या उपयोगी स्वीकार किया। सभी विषयों को समन्वित करके पढ़ाने का आदेश भी आपके विचारों में परिलक्षित होता है। ज्ञान के क्षेत्र में उन्होंने श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन की महत्ता को भी स्वीकार किया है।

1.5 चरित्र निर्माण और नैतिक शिक्षा

रबीन्द्रनाथ ठाकुर प्रकृति के सहचर्य एवं आश्रम शिक्षा पर बड़ी आस्था रखते थे। उनके विचार प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति से बहुत मेल खाते थे। इस सम्बंध में इलाचन्द जोशी ने गुरुदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर के विषय में अपने विचार व्यक्त किया है कि ''उन्होंने शिक्षा को प्राचीन आश्रमों की तरह ही खुले मैदान में, पेड़ों के नीचे छात्रों को पढ़ाने का नियम बना दिया –प्रारम्भ में उन्होंने संस्था का नाम भी ब्रह्मचार्याश्रम ही रखा था, शिक्षा के माध्यम से प्राचीन भारत के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक गौरव के पुनरुद्वार द्वारा नये वातावरण के साथ उसके सामन्जस्य की ओर रबीन्द्रनाथ विशेष प्रयत्नशील थे।''

''जो शिक्षा साधारण व्यक्ति को जीवन–संग्राम में समर्थ नहीं बना सकती जो मनुष्य में चरित्र–बल, परहित–भावना तथा सिंह के समान साहस नहीं ला सकती, वह भी कोई शिक्षा है? जिस शिक्षा के द्वारा जीवन में अपने पैरों पर खड़ा हुआ जाता है, वही है शिक्षा।''

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के अनुसार ''यदि हमें आदर्श विद्यालय की स्थापना करनी है तो जन समाज से दूर निर्जन मुक्त आकाश तथा उदार तरुलताओं के बीच उसकी व्यवस्था करनी होगी, वहाँ अध्यापकगण एकान्त में अध्ययन

तथा अध्यापन में व्यस्त रहेंगे और छात्रगण उस ज्ञान चर्चा के यज्ञ–क्षेत्र के बीच अपना निवास करेंगे।''

गुरुदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर विद्यार्थियों को दलबन्दी से दूर रखने की सलाह देते हैं। अद्यावधि विभिन्न व्यवसायिक पाठ्यक्रमों के शिक्षणार्थ सम्बन्धित विषय–विज्ञान प्रशिक्षित–कुशल शिक्षकों की महती आवश्यकता बन पड़ी है। ऐसे में शिक्षण की पद्धतियों के सार–स्वरूपण के अन्तर्गत शिक्षकों एवं शिक्षार्थियों की विभिन्न बौद्धिक दशाओं का विवेचन–विश्लेषण किया जाना नितान्त समीचीन प्रतीत होता है। आज शिक्षक को द्रोणाचार्य का नहीं अपितु गुरु वशिष्ठ, विश्वामित्र, समर्थ रामदास, दादा कोणदेव, रामकृष्ण परमहंस, रामतीर्थ, विरजानन्द का आदर्श सम्मुख रखना होगा। यही शिक्षक का जीवन दर्शन है, जिसे अपने आचरण से प्रभावित करना होगा, वाणी से सार्थक करना होगा, कर्म से प्रकट करना होगा और ज्ञान से प्रकाशित करना होगा। इस प्रकार मूल्यों की शिक्षा देनी होगी क्योंकि मूल्य वे कसौटियाँ हैं जिनके आधार पर अच्छे–बुरे, सही–गलत, कारणीय और अकारणीय का निर्णय करने की क्षमता छात्रों में उत्पन्न होती है।

1.6 राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा

भारतीय शिक्षा के जाज्वल्यमान नक्षत्र कवि हृदय गुरु रबीन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षा दर्शन राष्ट्रीय स्तर पर होने के साथ–साथ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी विशेष रूप में देखने को मिलता है। इन्होंने मात्र अपने देश की सीमा में रहकर यहाँ के नागरिकों को शिक्षित करने के लिए व उनके व्यक्तित्व के विकास के लिए शिक्षा की योजना नहीं की, बल्कि वैश्विक स्तर पर लोगों के सर्वांगीण विकासार्थ शिक्षा के सापेक्ष इन्होंने नवीन चेतनाधारा को प्रपुष्ट किया।

रबीन्द्रनाथ टैगोर ने राष्ट्रीय चेतना को जगाने के लिए शिक्षा और दर्शन का सन्तुलित सदुपयोग किया है। उन्होंने इसके लिए देश के युवा वर्ग को अपने केन्द्र में रखा क्योंकि वे इस बात को भली–भाँति जानते थे कि यदि देश का नवयुवक अपनी ऊर्जा को राष्ट्रीय चेतना के क्षेत्र में केन्द्रित कर देगा तो देश और समाज का साथ–साथ सम्पूर्ण विश्व का विकास होगा और यदि युवा वर्ग अपने–आपको नहीं सम्भाल सका तथा सही रास्ते जोड़कर आगे बढ़ने के लिए प्रबल उत्प्रेरक नहीं शक्ति प्रदान कर सका, तो देश ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व बौद्धिक विकलांगता व चारित्रिक अपंगता का शिकार हो जायेगा। ऐसा होना शायद सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक विनाशकारी लीला का प्रमुख आधार होगा। उनके अनुसार ''मेरी आशा, मेरा विश्वास नवीन पीढ़ी के नवयुवकों पर

है। उन्हीं में से मैं अपने कार्यकर्ताओं का संग्रह करूँगा। वे तेज गति से देश की यथार्थ उन्नति सम्बन्धी सारी समस्या का समाधान करेंग। वर्तमान काल में अनुष्ठेय आदर्श को मैंने एक निर्दिष्ट रूप में व्यक्त कर दिया है और उसको कार्यान्वित करने के लिए मैंने अपना जीवन समर्पित कर दिया है। वे एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र का विस्तार करेंगे और इस प्रकार हम धीरे–धीरे समग्र भारत में फैल जयेंगे।''

1.7 भौतिक व आध्यात्मिक शिक्षा

गुरुदेव रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने बड़े पैमाने पर विज्ञान की शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने भारतीय वैज्ञानिकों और लेखकों के प्रयासों का मुक्त ह्रदय से स्वागत किया। 'इंडियन एसोसियेशन फार दि कल्टिवेशन ऑफ साइंस इन कलकत्ता' के संस्थापक और वैज्ञानिक शिक्षा प्रयासों के महान् संरक्षक डॉक्टर महेन्द्रपाल लाल सरकार के इस दिशा में किये गये प्रयासों की सराहना की है। उन्होंने सन् 1908 में यह सम्पादकीय टिप्पणी की कि ''विज्ञान की शिक्षा मनुष्य में ज्ञान के प्रति जिज्ञासा, ध्यानपूर्वक अध्ययन और प्रयोग करने तथा सही दिशा में चिन्तन करने की शक्ति को उत्पन्न करती है। इस अध्ययन से समस्त अन्धविश्वास और गलत धारणायें इस प्रकार दूर हो जाती है, जिस प्रकार प्रातः सूर्य निकलने से कोहरा धुन्ध नष्ट हो जाता है।''

शिक्षा मिलने में उन्होंने प्राकृतिक नियमों के अध्ययन और उन पर अपना अधिपत्य जमाने के लिए पश्चिमी विज्ञान के अध्ययन की जोरदार बात उठायी। उन्होंने कहा कि इस अध्ययन के बल पर पश्चिम ने सारे संसार पर विजय पायी है। 'आइडियल ऑफ एजूकेशन' में रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने यह मनोरंजक विचार व्यक्त किया है कि वास्तविक वैज्ञानिक दृष्टिकोण का मूल रूप आध्यात्मिक है। सत्य स्वयं में आध्यात्मिक है और पशु का मस्तिष्क वास्तव में भौतिकवादी है जो कि दुर्घटना के अन्धकारमय परदे को पार करने और सार्वभौमिक नियमों के गहरे और विशाल छात्र में पदार्पण करने में असमर्थ है। विज्ञान की शिक्षा में गहरी आस्था ने उन्हें 76 वर्ष की आयु में बच्चों के लिए विज्ञान की पाठ्य–पुस्तक लिखने को मजबूर किया और वर्ष 1936 में उन्होंने बंगला भाषा में 'विश्व परिचय' लिखी। इस पुस्तक की प्रस्तावना में उन्होंने लिखा है कि ''यह उन बालकों के लिए जिन्होंने शिक्षा प्रारम्भ की है, आवश्यक है कि यदि प्रारम्भ में ही वे विज्ञान के कोषागार में पैर न रख सकें तो कम से कम उस भवन के आँगन में तो पदार्पण करें।''

1.8 प्राच्य एवं पाश्चात्य शिक्षा

रबीन्द्रनाथ टैगोर ने भारतीय शिक्षा के बहुआयामी विकास के लिए प्राच्य एवं पाश्चात्य प्रवृत्तियों के आधार पर शिक्षा का उन्नयन किया है। इन्होंने जहाँ सनातन मूल्यों पर अधारित शिक्षा की अभिवृत्ति ऊर्ध्वगामी करने हेतु आवश्यक उपागमों को संकलित करने, प्रयुक्त करने व प्रभावी बनाने का निर्देश दिया है, वहीं दूसरी ओर आधुनिक मानव मूल्यों पर आधारित जीवनाभिव्यक्ति को विकास का स्रोत बनाया है। इनकी मान्यता रही कि अतीत के आधार पर आधुनिक स्थितियों का धारण करते हुए किया जाने वाला विकास मूल्यवान होता है और मनुष्य के लिए विकास के सभी मार्ग प्रशस्त करता है।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने शिक्षा को समाज से घनिष्टता से सम्बन्धित विकासशील जीवन प्रक्रिया स्वीकार करते हुए उसे समाज के भौतिकहित साधन मे ंभी सहायक बनने का आह्वान किया है। एक ओर शिक्षा व्यक्तित्व की परिष्कृति का माध्यम है, उसकी पूर्णता व दिव्यता का साधन है, वहीं दूसरी ओर वह समाज धर्म की ओर सजग रहकर ही अपनी सार्थकता प्रमाणित कर सकती है। यही उपयोगिता और आनन्द का सम्मिश्रण शिक्षा का लक्ष्य है। शान्ति निकेतन व विश्वभारती के छात्रों मे समाज सेवा की भावना को जगाने के प्रयोगों में रबीन्द्रनाथ ठाकुर के शिक्षा दर्शन मे समाज की स्थिति का पूर्ण संकेत प्राप्त होता है

1.9 स्त्री शिक्षा

रबीन्द्रनाथ ठाकुर स्त्री को ईश्वर की श्रेष्ठतम् रचना मानते थे। उनके अनुसार "स्त्री और पुरुष का पद समान है। क्योंकि वे एक दूसरे के अभाव की पूर्ति करते हैं। इसलिये एक दूसरे के बिना रहने की कल्पना नहीं की जा सकती। अतः यह सोचना आवश्यक है कि यदि एक के पद को आघात लगता है, तो दूसरे की हानि और बर्वादी होती है। उन्होंने बताया कि मुख्य रूप से स्त्री को पत्नी, माता और समाज के निर्माता के रूप में कार्य करना होता है। उन्होंने स्त्री शिक्षा पर बहुत जोर दिया था।

अपने शिक्षा सम्बन्धी लेखों तथा भाषणों में उन्होंने स्त्री को बहुत महत्वपूर्ण बताया। उन्होंने कहा कि बच्चों का पालन एवं उनकी आदतों को परिष्कृत कर योग्य नागरिक बनाने में स्त्रियों का विशेष योगदान होता है। आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्त्रियाँ, पुरुषों का हाथ बँटाती हैं। प्राचीन भारत का उदाहरण देते हुए रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा कि वैदिक कार्य मे अनेक विदुषी स्त्रियाँ थीं, जिन्होंने वेद, मंत्रों की रचना की उस समय का भारतीय समाज शिक्षा नीति, राजनीति, धर्म एवं अर्थ की दृष्टि से वर्तमान समाज से कहीं अधिक उन्नत था।उन्होंने स्त्रियों

को गृह कार्य की शिक्षा देने पर विशेष बल दिया और कहा कि उनके रुचि और रुझान को अवश्य ध्यान में रखा जाये। उन्होंने बेसिक शिक्षा का सामान्य पाठ्यक्रम संचालित करने का प्रस्ताव पेश किया, जिसके अनुसार पाँचवीं कक्षा तक छात्र–छात्राओं का विषय समान है, केवल चौथी कक्षा मे छात्राओं के लिए गृह विज्ञान का विषय शामिल कर दिया। छठीं और सातवीं कक्षा में बेसिक काम के स्थान पर छात्राओं को गृह विज्ञान विषय लेने की छूट थी। वर्द्धा शिक्षा योजना में माता–पिता को यह अधिकार दिया गया कि यदि वे सह शिक्षा के पक्ष में नहीं है, तो बारहवीं कक्षा में भी बालिकाओं को सह शिक्षा देने के पक्ष में रहे। रबीन्द्रनाथ टैगोर के विचार इस शिक्षा के प्रति बहुत महत्वपूर्ण हैं। यदि हम एक पुरुष को शिक्षित करते हैं तो एक व्यक्ति को शिक्षित करते हैं, परन्तु एक स्त्री को शिक्षित करने का मतलब है एक परिवार को शिक्षित करना। रबीन्द्रनाथ ठाकुर के अनुसार वेदों में भी इसी शिक्षा का समर्थन किया गया है–

"इंद्रम् मंत्रम् पत्नी पठेत"

अर्थात् यह मंत्र पत्नी पढ़े। वेद के इस मंत्र से प्रकट है कि पत्नियाँ शिक्षित होंगी तो यज्ञ में सम्मिलित हो सकेंगी। अतः स्त्री को पुरुष के समान शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए। इसी शिक्षा पर अधिकाधिक बल देते हुए रबीन्द्रनाथ टैगोर ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि बाह्य प्रवृत्ति में पुरुष प्रमुख होता है। इसलिए वाह्य प्रवृत्ति का विशेष ज्ञान उसके लिए आवश्यक है। आन्तरिक प्रवृत्ति में स्त्री प्रमुख होती है। इसलिये गृह व्यवस्था और बाल–बच्चों की शिक्षा–दीक्षा आदि विषयों का विशेष ज्ञान उसके लिए आवश्यक है।

1.10 जन सामान्य की शिक्षा

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के विचार में बालक चंचलता प्राकृतिक और बाल सुलभ है और इसको दबाने के स्थान पर इसको समुचित रूप से मार्ग प्रशस्त कर रचनात्मक कार्यो में लगाना चाहिये, जिससे कि वह आगामी जीवन में भाविष्य की शक्तियों, प्राकृतिक चारित्रिक विकास और आत्मविश्वास का मुख्य आधार बन सके। यह सर्वमान्य है कि प्रवृत्ति का दमन बालक में हीन भावना को जन्म देता है, इसलिए बुद्धिमान, बालको ऐसे विकास को और बढ़ावा देते हैं, क्योंकि प्रकृति से बालको की स्फूर्ति और शक्ति प्राप्त होती है। रबीन्द्रनाथ ठाकुर के शान्तिनिकेतन में पठन एवं पाठन विधियों में वास्तविक स्वतन्त्रता है, क्योंकि वहाँ कोई भी यह दबाव नहीं है कि वहाँ पर कोई क्या सीखे, स्वाभाविक रूप से वहाँ उस संस्था में स्वतन्त्रता का वातावरण है। शान्ति निकेतन के स्वतन्त्र वातावरण के सम्बन्ध में, जिन लोगों ने वहाँ के वातावरण को देखा है, वही उसकी व्याख्या कर सकते हैं और वही वहाँ के आनन्दपूर्ण वातावरण को समझ सकते है। प्राणनाथ वानप्रस्ती के शब्दों में "प्रायः पेड़ों के नीचे ही

पढ़ाई होती है। यदि विद्यार्थी चाहते हैं तो पेड़ों की डालियों पर बैठ कर भी वे पढ़ते हैं। परीक्षा के समय भी जिस स्थान पर चाहते हैं, वहीं बैठकर परीक्षापत्र लिखते हैं।''

गुरुदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर ने भारतीय शिक्षा को प्रसारित करने के लिए संस्कृति के वास्ते उसे एक उपयोगी आयाम के रूप में प्रयुक्त किया। उन्होंने शिक्षा और दर्शन का समन्वयात्मक रूप प्रस्तुत करने का कार्य किया है। उनकी मान्यता थी कि जब तक जन सामान्य का विकास नहीं होगा, तब तक किसी भी राष्ट्र के उत्थान की परिकल्पना मूर्तिमान नहीं हो सकती। जन–जन का विकास ही राष्ट्र के उत्थान का कारक हुआ करती है। इन्होंने राष्ट्र के नागरिकों के उत्थान के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया।

गुरु रबीन्द्रनाथ टैगोर की भाँति समाज के विकास की विविध अवस्थाओं को अपने कार्य का मूल उद्देश्य माना। इनकी मान्यता रही कि मनुष्य प्रथमतः आत्म विकास करे, उसके तन और मन का संतुलित विकास अपेक्षित है। यदि मनुष्य का शरीर स्वस्थ होता है तथा मन सांस्कृतिक गम्भीरता से ओत–प्रोत रहता है तो उसके द्वारा किसी भी विषय पर गम्भीर चिन्तन आसानी से किया जाता है। एक मनुष्य ही किसी समाज की महत्वपूर्ण इकाई व प्रमुख आधार होता है।

गुरुदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर ने समाज के बहुआयामी उत्थान के लिए इस प्रकार से अपने–अपने विचार व्यक्त किये, जो भारतीय शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है। यदि भारतीय शिक्षा का सही उपयोग किया जाता है तो यह सारा कुछ कार्य सहज है और यदि भारतीय संस्कृति का शैक्षिक पृष्ठभूमि में सही ढंग से उपयोग नहीं हो पाता है तो राष्ट्र के प्रति लोगों की धारणायें मात्र सैद्धान्तिक प्रदर्शन के अतिरिक्त कुछ भी और नहीं हो सकेगा।

1.11 निष्कर्ष :

आज वर्तमान शिक्षा प्रणाली के प्रति चारों ओर असन्तोष ही असन्तोष है। समज की सामान्य धारणा यह है कि वर्तमान शिक्षा द्वारा तैयार की जा रही जनशक्ति और समाज की आवश्यकताओं में विरोधाभास हैं। विद्यालय में सीखे गये ज्ञान एवं दक्षता का वास्तविक जीवन के प्रसंगो से कोई तालमेल नहीं है। सबको अपनी–अपनी आकाँक्षाओं के अनुरूप विकास के समान अवसर उपलब्ध नहीं है। हमारी शिक्षा नैतिक तथा अध्यात्मिक मूल्यों से सर्वथा विहीन हो गयी है। छात्रों में व्याप्त असंतोष, क्षोभ, कुण्ठा, निराशा, मार्यादा हीनता, विद्रोहात्मक प्रवृतियाँ

और विध्वंसक क्रियाकलापों से आज हमारा देश आक्रान्त है। शिक्षा से समाज की अपेक्षाएँ अधूरी और निराशाजनक हैं। अतः शिक्षा के उपभोक्ताओं की नकारात्मक प्रतिक्रियाओं से उभरा अंसतोष सामाजिक धरातल पर उफन रहा है। अनुशासनहीनता, सामाजिक, नैतिक एवं चारित्रिक पतन, मूल्यों का हास, सामाजिक तनाव, युवकों में दिशाहीनता, भ्रष्टाचार, सॉम्प्रदायिकता, जातीयता, भारतीय संस्कृति की रक्षा की समस्या, राष्ट्रीय एकता का अभाव, विश्वयुद्ध की आशंका अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सद्भाव की समस्या, शिक्षक–शिक्षार्थी दोनों के कर्त्तव्यों का ह्रास, प्रशासन की शिथिलता तथा उत्तरदायित्व का अभाव आदि समस्याएँ हमारी आज की शिक्षा के लिए चुनौती है। ऐसी अव्यवस्था और अराजकता की स्थिति में गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षा दर्शन ही हमारी सहायता कर सकता है। टैगोर शिक्षा दर्शन आज के युग में केवल भारत के लिए ही वरन सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रासंगिक है। टैगोर के विचार सर्वोच्च मानवीय मूल्यों पर आधारित हैं। इसलिए इनका केवल पूर्वकालिक महत्व ही नहीं, वरन् आज भी हम इनसे उसी प्रकार प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं और अपने देश व समाज को उन्नति की दिशा की ओर अग्रसर कर सकते हैं।

टैगोर की शैक्षिक विचारधारा में धर्म तथा नैतिकता को भी अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। हमारे देश के धर्मनिरपेक्ष प्रजातन्त्र के सम्भवतः टैगोर विचारों से सर्वाधिक प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए क्योंकि इनकी धर्म तथा नैतिकता की परिभाषा विश्व मानवता को अपने में समाहित करती है, उसमें संकीर्णता का लेशमात्रा भी स्थान नहीं है। टैगोर के अनुसार धर्म केवल धार्मिक नेताओं के सन्देशों में ही नहीं है वरन् धर्म तो संस्कृति और ज्ञान की प्राप्ति में है, समाज के निर्धन, निरक्षर और दलित एवं पीड़ित लोगों की सेवा में ही है, विभिन्न देशों के प्रति सद्भावना में है, शान्ति स्थिरता एवं उच्च आदर्शों की स्थापना एवं पालन में है वह तो आध्यात्मिक सत्य की खोज प्राप्ति और प्रसार में निहित है। इनका कहना है कि ईश्वर की उपासना निष्ठापूर्वक कर्त्तव्यपालन द्वारा की जा सकती है, जहाँ कृषक खेतों में कठोर परिश्रम करता है श्रमिक कठोर चट्टाने तोड़ता है वहीं ईश्वर की उपस्थिति का वास्तविक रूप देखा जा सकता है। टैगोर ने धर्म का अर्थ चरित्र निर्माण, सदाचरण और कार्यों के सुसंस्कार से लिया और मानव सेवा को ही प्रमुख धर्म माना। इनके अनुसार धार्मिक शिक्षा के दो पक्ष हैं:– प्रथम चरित्र एवं आचरण का परिष्कार जो सत्यानुराग के लिए अति आवश्यक है और द्वितीय ज्ञानेन्द्रियों का विकास और संस्कार जिसके अनुभवों से सुखानुभूति हो। आज के समाज में यह नैतिक नियम होना चाहिए, जो रचनात्मकता को प्रोत्साहित करे और संग्रह की प्रवृति को हतोत्साहित करे। इसका उद्देश्य केवल जन–कर्त्तव्य का निर्वाह करना नहीं वरन् अपनी क्षमता का अधिकतम विकास करना भी है। अधिकतमक परिश्रम करने से ही विकास का मार्ग खुलता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- टैगोर रवीन्द्रनाथ टैगोर "साधना" डिलिवर्ड एट द हावर्ड युनिवर्सिटी, यू.एस.ए. मैकमिलन कम्पनी न्यूयार्क– 1912–13
- टैगोर रवीन्द्रनाथ क्रिसिज इन सिविलाइजेशन, विश्वभारती पब्लिकेशन डिपार्टमेन्ट कलकत्ता– 1950
- टैगोर रवीन्द्रनाथ "ऑन द एज्स ऑफ टाइम्स" विश्वभारती पब्लिकेशन डिपार्टमेन्ट कलकत्ता, 1950
- टैगोर रवीन्द्रनाथ "द को ऑरेटिव प्रिंसीपल्स" विश्वभारती, काथ सामन्त, कलकत्ता, 1963
- टैगोर रवीन्द्रनाथ "मेरी आत्मकथा" देवनागर प्रकाशन जयपुर 1987
- दत्त, कृष्णा एण्ड एड्यू रोबिसन (1965) रवीन्द्रनाथ टैगोर : दा मिरयड माइन्डेडमैन, लन्दन : ब्लूम्सबुरी
- कृपलानी, कृष्णा, रवीन्द्रनाथ टैगोर (1980) कलकत्ता विश्वभारती
- "ओ" कॉन्नेल, कैथलीन (2002) रविन्द्रनाथ टैगोर : दा पोयट एज एड्यूकेट, कलकत्ताः विश्वभारती (2002)
- कृपलानी, आप सिंह, पी. 316 आलसो प्राबिर कुमार देवनाथ, रवीन्द्रनाथ टैगोर विदेशी (फोरिजनर्स इन रवीन्द्रनाथस होली) प्लेस, कैलकाटा बुक होम, 1986
- के.के. नारंग (2016), शिक्षा के सिद्धांत तथा विधियां, प्रकाश ब्रदर्स, लुधियाना।
- वालिया, जे.एस. (2007), शिक्षा के सिद्धांत तथा विधियां, पाल पब्लिशर्स, जालन्धर।
- पाठक, पी.डी. (1977), भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- पाण्डेय, रामशक्ल (2011), उभरते हुये भारतीय समाज में शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- मित्तल, एम.एल. (2009), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ।
- सक्सेना, सरोज (2007), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
- ठाकुर रवीन्द्रनाथ–रवीन्द्रनाथ का शिक्षादर्शन, अनुवादक– गोपाल प्रधान, श्यामबिहारी राय द्वारा ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट, लिमिटेड, बी.–7, सुभाष चौक, लक्ष्मीनगर, दिल्ली 110092 के लिए प्रकाशित, संस्करण 2017 पृ0 9–10
- ठाकुर रवीन्द्रनाथ–रवीन्द्रनाथ का शिक्षादर्शन, अनुवादक– गोपाल प्रधान, श्यामबिहारी राय द्वारा ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट, लिमिटेड, बी.–7, सुभाष चौक, लक्ष्मीनगर, दिल्ली 110092 के लिए प्रकाशित, संस्करण 2016